शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 जनवरी 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

वैदिक साहित्य में नारी

डॉ. सन्ध्या राठौर
एसोसिएट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग)
हंसराज महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली, भारत

शोध संक्षेप

वैदिक काल में स्त्रियों को पूरी स्वतंत्रता थी। जिस तरह पुरुष ब्रह्मवादी हो गए हैं, उसी तरह स्त्रियाँ भी ब्रह्मवादिनी हो गयी हैं। पहले स्त्रियों को वेदाभ्यास का अधिकार था। ऐसी ब्रह्मवादिनी स्त्रियाँ हो गयी हैं, जिनके सूक्त वेद में बहुत प्रसिद्ध हैं प्रस्तुत शोध पत्र में 'वैदिक साहित्य में नारी' का विवेचन किया गया है।

वैदिक साहित्य में नारी

वेद का सामान्य अर्थ है 'ज्ञान'। विद्वानों ने विद् ज्ञाने, विद् सत्तायाम्, विद् लाभेऔरविद् विचारणे- इन चार धातुओं के आधार पर वेद की व्यापक व्याख्या की है। सायणाचार्य के अनुसार, इष्ट-प्राप्ति और अनिष्ट-निवारण का अलौकिक उपाय जो ग्रन्थ बतलाए, वह वेद है- 'इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयोरलौकिकमुपायं योग्रन्थोवेदयति स वेदः'।[1] उनके अनुसार वेद का वेदत्व इस बात में है कि जो तत्त्व प्रत्यक्ष अथवा अनुमान प्रमाण के द्वारा नहीं जाना जा सकता, उसे वेद से जानते हैं-

प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते।
एतंविदन्तिवेदेनतस्माद्वेदस्य वेदता।।

वेद विविध बहुमूल्य विचार रूप रत्नों के रत्नाकर हैं। मानव के लिए उपयोगी समस्त ज्ञान-विज्ञान, सदुपदेश एवं सत्प्रेरणायें इसमें निहित हैं। वैदिक वाङ्मय में तत्कालीन भारतीय समाज का जो चित्र अंकित है, उसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वह अत्यंत सुख-सौमनस्यपूर्ण, समता और समरसतामूलक था। परिवार संयुक्त होते हुए भी सबके विकास की भावना से अनुस्यूत थे। समाज के सभी वर्गों में परस्पर प्रेम की भावना थी। समाज में नारियों को गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त था। वैदिक साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में स्त्रियों की शिक्षा-सम्बन्धी व्यवस्था उन्नत थी। जैसे अत्रि कुल की विश्ववारा ने ऋग्वेद का 5.28 सूक्त रचा है। अपाला ने ऋग्वेद का 8.91 और घोषा काक्षीवती ने ऋग्वेद का 10.39 सूक्त रचा है। ऋग्वेद में चौबीस और अथर्ववेद में पांच वैदिक ऋषिकाओं का उल्लेख मिलता है।[2] इन दोनों वेदों में ऋषिकाओं के दृष्ट मन्त्रों की संख्या 422 है। इन ऋषिकाओं में से वाक् आम्भृणी (वागांभृणी) के वाक् सूक्त में वाक्-तत्त्व का शास्त्रीय विवेचन भाषाविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। श्रद्धा कामायनी का श्रद्धा सूक्त मनोविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त सारगर्भित है। इसमें श्रद्धा का महत्त्व वर्णित है। सूर्या सावित्री के सूक्तों में विवाह-संस्कार वर्णित है। ये सूक्त सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जनवरी 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

इन्द्राणी के सूक्त में स्त्रियों के गौरव का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त रोमशा ब्रह्मवादिनी से ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ अध्यात्म का भी उपदेश करती थीं। एक मन्त्र में इन्द्राणी को सेनानी के रूप में प्रस्तुत किया गया है।[3] इसमें कहा गया है कि इन्द्राणी सेना का नेतृत्व करे। वह सदाविजयिनी रही है। ऋग्वेद के एक सूक्त (10.159) में शची का गौरव वर्णित है। शची का कथन है कि मैं समाज में अग्रगण्य हूँ। मैं उच्चकोटि की वक्ता हूँ। मैं विद्वानों में मूर्धन्य हूँ। पति भी मेरे कहने में है।[4] मेरे पुत्र शत्रुओं पर विजय पाने वाले हैं। मेरी पुत्री तेजस्विनी है और मैं स्वयं विजयिनी हूँ।[5] अभिप्राय यह है कि उसके पुत्र युद्धों में जाते हैं और शत्रुओं को पराजित करते हैं। उनमें क्षात्र धर्म पूर्णतया विराजमान है। इसी प्रकार पुत्री के लिए कहा गया है कि वह भी तेजस्विनी और गुणमयी है। पुत्री का तेजस्विनी होना भावी सन्तति की ओजस्विता को सूचित करता है।

वेदों में नारी को ब्रह्मा कहा गया है।[6] जैसे ब्रह्मा ज्ञान का अधिष्ठाता है, सृष्टिकर्ता तथा यज्ञों का संचालन करता है। उसे यज्ञ में सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। उसी प्रकार नारी सन्तान की उत्पत्ति के द्वारा परिवार की वृद्धि करती है। वह परिवार में ज्ञान का आधार होती है। ज्ञान-विज्ञान में निपुण होने के कारण ही उसे ब्रह्मा बताया गया है।

गृहिणी के रूप में नारी का परिवार में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान इससे भी ज्ञात होता है कि नारी को ही घर कहा गया है।[7] ऋषि कहता है कि गृह की सुव्यवस्था, बच्चों के लालन-पालन के साथ ही अग्निहोत्र में भाग लेती हुई वह पति के धर्मानुष्ठान में भी साहचर्य निभाए। इस प्रकार घर का आधार स्त्री ही परिवार का मूल है। इन्द्र सम्बन्धी एक मन्त्र में कहा गया है कि कल्याणमयी पत्नी के कारण घर स्वर्ग के सदृश आनन्दमयी हो जाता है।[8] सुन्दर वेशभूषा से विभूषित होकर आनन्दमयी स्मिति बिखेरती हुई वह पति की प्रियतमा थी साथ ही पति के दायित्वों में भी हाथ बंटाती थी।[9]

ऋग्वेद के सूर्या सूक्त 10 में स्त्री के गृहिणी-स्वरूप की सम्यक् रीति से समीक्षा की गई है। एक मन्त्र में नवविवाहित वधू को अपने घर में प्रवेश करने और सब पर शासन करने के लिए आमन्त्रित किया गया है।[11] गृहस्थी के दायित्वों के प्रति गृहिणी को 'गार्हपत्याय जागृहि[12] कहकर जागरूक रखा गया है। उससे द्विपद प्राणियों के साथ ही चतुष्पदों के प्रति भी कल्याणमयी होने की अपेक्षा की गई है।[13]

स्त्री को सरस्वती का रूप माना गया है। उसे विराट् अर्थात् विशेष तेजोमयी कहा गया है। वह अपने ज्ञान में प्रतिष्ठित हो और विष्णु की तरह आदर प्राप्त करे।[14] जिस प्रकार विष्णु सर्वत्र पूज्य और प्रतिष्ठित है उसी प्रकार स्त्री भी परिवार में प्रतिष्ठित हो। जैसे शुक्लप्रतिपदा का चन्द्रमा अन्धकार के बाद प्रकाश लाता है उसी प्रकार स्त्री पुत्र रूपी रत्न को जन्म देकर निरन्तर बढ़ते हुए प्रकाश का साधन बने।

धार्मिक तथा सामाजिक उभय दृष्टियों से पत्नी का महत्त्व था। पुरुष की पूर्णता पत्नी के बिना नहीं मानी जाती थी। बहुपत्नीत्व प्रथा होने पर भी किसी प्रकार का द्वेष भाव परिलक्षित नहीं होता। वेद में पत्नी के लिए 'भार्या' (भरण करने योग्य) पद का व्यवहार हुआ है। याज्ञवल्क्य की दोनों स्त्रियों का उल्लेख इसी रूपमें है।[15] जिनमें कात्यायनी सामान्य बुद्धिमती और मैत्रेयी स्वाध्यायरता तथा दार्शनिक थी। वामदेव्य साम की उपासना के प्रकरण में कहा गया है कि जिस

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जनवरी 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उपासक के अनेक पत्नियाँ हों वह उनमें से किसी का भी परित्याग न करे।[16]

उपनिषदों में परिवार का पूर्णतः विकास दृष्टिगोचर होता है। इसके प्रमुख घटक पति तथा पत्नी हैं। बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है कि पहले पुरुषाकार आत्मा ही था। उसने अपने को एकाकी जाना। वह स्वयं रमण करने में असमर्थ था, इसीलिए दूसरे की इच्छा की। वह परस्पर आलिंगित स्त्री-पुरुष की भांति परिमाण वाला होगया। उसने अपने देह को विभक्त किया जिससे पति-पत्नी हुए।[17]

वैदिक ऋषियों ने स्त्री और पुरुष को मानवजीवन की गाड़ी के दो चक्र समझकर स्त्री को पुरुष के समकक्ष ही स्थान दिया है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार पत्नी पुरुष की आत्मा का आधा भाग है।[18] वेद की संस्कृति में तो नारीगृह की साम्राज्ञी है। अथर्ववेद में नारी की पति-प्राप्ति का उल्लेख करते हुए कहा है 'यह नारी पति को प्राप्त करे, सोमराजा इसे सौभाग्यशाली बनाए। पति-गृह में जाकर पुत्र-पुत्रियों को जन्म देती हुई यह रानी बनकर रहे और सदासौभाग्यवती बनी रहे।[19]

विवाह-प्रसंगमें वधू को आशीर्वाद देते हुए कहा गया है- 'जैसे महान् समुद्र नदियों को अपना साम्राज्य दे देता है वैसे ही तुझे भी पतिगृह में जाकर साम्राज्ञी का पद प्राप्त हो।[20] तू श्वसुरों की दृष्टि में साम्राज्ञी बन, देवरों की दृष्टि में साम्राज्ञी बन, ननद की दृष्टि में साम्राज्ञी बन, सास की दृष्टि में साम्राज्ञी बन।[21] इस प्रकार सास-ससुर, ननदों और देवरों सहित सम्पूर्ण परिवार के लिए वह 'साम्राज्ञी' के गौरवास्पद पद पर प्रतिष्ठित की गई है।[22]

वेदों में इस गृह-साम्राज्ञी के लिए करणीय कर्मों का उपदेश दिया गया है जो आधुनिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और सार्थक है। वैदिक ऋषि कहता है कि 'जहाँ गृहीजन परस्पर सौहार्दभाव से रहते हुए शुभ कर्मों को करते हुए शरीर के रोगों से दूर रहते हुए सुख सेरहा करते हैं, उस गृहस्थ लोक में हे नारी, आज तू प्रविष्ट हुई है। स्मरण रख, तेरे द्वारा परिवार के किसी भी पुरुष को और किसी भी पशु को क्लेश न पहुँचे।[23] तू मानसिक प्रसन्नता की, प्रजा की, सौभाग्य की, सुख-समृद्धि की आकांक्षा रखती हुई घर में, अमृतमयी अवस्था लाने के लिए कटिबद्ध रह।[24] प्रबुद्ध रह, ज्ञानवती और जागरूक हो, दीर्घायु प्राप्त कर, सौ वर्ष जीवित रह। पतिगृह में जाकर गृहपत्नी बन। परमात्मा तेरी आयु को लम्बा करे।[25] ऋग्वेद में नारी को गृहलक्ष्मी के रूप में चित्रित करते हुए उसे 'कल्याणीजाया' अर्थात् मंगलकारिणी स्त्री कहा है। साथ ही कहा गया है कि उसके घर में संगीत की मधुर ध्वनि होती है।[26] नारी के लिए 'कुलायिनी' और 'पुरन्धि' शब्दों के प्रयोग से सूचित होता है कि परिवार के पालन-पोषण का दायित्व नारी पर ही था। वह कुटुम्ब की पालक है।[27] एक मन्त्र में उसे कुलपा कहा गया है।[28] कुलपा का अर्थ है- कुल या वंश की रक्षक। नारी वंश की प्रतिष्ठा है। वह कुल परंपराओं की पालक है और कुल को ज्योतिर्मय बनाने के लिए सुयोग्य सन्तानों को जन्म देने वाली है। कुल की स्थिति को सुदृढ़ करने का उत्तरदायित्व नारी पर होता है। केवल गृहस्थ धर्म का पालन ही उसका कर्तव्य नहीं है अपितु कुल की प्रतिष्ठा में वृद्धि करना, प्राचीन उत्कृष्ट परंपराओं का निर्वाह करना, वंश के सामान्य जनों को उचित सम्मान देना, कुल को दूषित करने वाले दुर्गुणों का परित्याग और कुल के लिए ज्ञान-विज्ञान वैभव आदि से युक्त सन्तान को जन्म देना, उनको उत्तम आचार-व्यवहार की शिक्षा देना आदि कार्य नारी के उत्तरदायित्व में

हैं। मन्त्र के कुलपा शब्द के द्वारा इन्हीं गुणों का निर्देश है।

नारी के लिए 'सहस्रवीर्या' शब्द का प्रयोग हुआ है। इसका अभिप्राय है कि वह एक प्रकार की नहीं अपितु सहस्रों प्रकार का सामर्थ्य रखती है।[29] इसमें नारी को अजेय और शत्रु विजयिनी बताया गया है। उषा के उदाहरण द्वारा बताया गया है कि उषा में तेजस्विता है अतः वह अन्धकार दूर करती है। वह निःसंकोच रूप से सदाप्रातः प्रकट होती है। उसके उदय के बाद ही सूर्य आता है, यज्ञादि होते हैं और अग्नि को प्रदीप्त किया जाता है। अतः वह इन कार्यों में अग्रणी है। इसी तरह जो स्त्री नवीन शक्ति को धारण करते हुए ज्ञान का प्रकाश फैलाती है, वह अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर कर सकती है। जो स्त्रियाँ निर्भीक और निःसंकोच हैं, वे ही नेतृत्व कर सकती हैं। स्त्री में नेतृत्व के लिए आवश्यक है कि उसमें अदम्य साहस हो और निर्भयता हो।

वेद के अनुसार एक ओर नारी माधुर्य की मूर्ति है, तो दूसरी ओर शिला जैसी कठोर भी है। इसी कठोरता के आदर्श को स्मरण कराने के लिए वेद में नववधू को शिलारोहण कराते हुए कहा गया है- 'पृथिवी देवी के पृष्ठ पर तुझ प्रजा के लिए मैं एक अचल पत्थर को रख देता हूँ, इस पर तू खड़ी हो, इस कठोर स्पर्श में आनन्द अनुभव कर, पत्थर जैसी वीर और वर्चस्विनी बन, परमात्मा तेरी आयु लम्बी करे।[30]

वैदिक आर्यों के जीवन में स्त्रियों का उन्नत स्थान था। उनके अप्रत्यक्ष सन्दर्भ भी उतने ही रोचक हैं जितने कि प्रत्यक्ष। वायु देवताओं के वर्णन में इस प्रकार की उपमाएं दर्शनीय हैं। वे बादलों के आवरण में उसी प्रकार रहते हैं जिस प्रकार स्त्रियां घरों में रहती हैं।कभी-कभी वे उसी प्रकार बाहर आकर अपनी अभिप्रेरक उपस्थिति का अनुभव कराते हैं, जिसप्रकार यज्ञों में भाग लेते समय अथवा मन्त्रोच्चारण करते समय स्त्रियां सुन्दर लगती हैं।[31] स्त्री को ऐसे शब्दों से सम्बोधित किया गया है जिससे सौन्दर्य, पवित्रता तथा मंगल का बोध होता है। जैसे कल्याणी, आनन्ददायिनी अथवा सुभगे, सुन्दरी इत्यादि। अग्निदेवता की तुलना घर की एक ऐसी पत्नी से की गई है जो सभी का आभूषण है।[32]

द्युलोक और पृथिवी को दो बहिनों के रूप में प्रस्तुत किया गया है क्योंकि दोनों एक ही परमात्मा से उत्पन्न हुई हैं। अतः ये दोनों बहिनें हैं। बहिनों का कर्तव्य है कि वे एक दूसरे से दूर रहते हुए भी द्यावापृथिवी की तरह परस्पर प्रेम भाव बनाए रखें और एक-दूसरे का हितचिन्तन करें।[33]

निष्कर्ष

वेद मानव मात्र के लिए प्रकाश स्तम्भ हैं। जहाँ वेदों की ज्योति है, वहाँ प्रकाश है, उन्नति है, सुख है, शान्ति है और सतत विकास है। वेद को माता कहा गया है। जैसे माता सन्तान की रक्षा करती है उसी प्रकार वेद सारे संसार की रक्षा का साधन है। वेदमाता के समान ज्ञान रूपी दूध पिलाकर संसार में सुख की वृद्धि करते हैं।[34]

पादटिप्पणी

1 सायणाचार्य, तैत्तिरीय-संहिता-भाष्यभूमिका।

2 ऋग्वेद 1 सूर्यासावित्री 2 घोषा काक्षीवती 3 सिकतानिवावरी 4 इन्द्राणी 5 यमी वैवस्वती 6 दक्षिणाप्राजापत्या 7 अदिति 8 वाक् आम्भृणी 9 अपालाआत्रेयी 10 जुहू ब्रह्मजाया 11 अगस्त्यस्वसा 12 विश्ववाराआत्रेयी 13 उर्वशी 1 सरमादेवशुनी 15 शिखण्डिन्यौअप्सरसौ 16 पौलोमी शची 17 देवजामयः इन्द्रमातरः 18 श्रद्धा कामायनी 19 नदी 20 सर्पराज्ञी 21 गोधा 22 शश्वतीआंगिरसी 23 वसुक्रपत्नी 24 रोमशाब्रह्मवादिनी। अथर्ववेदः 1 सूर्यासावित्री 2 मातृनामा 3 इन्द्राणी 4 देवजामयः 5 सर्पराज्ञी।

3 इन्द्राण्येतुप्रथमाजीतामुषितापुरः। अथर्ववेद1.27.4
4 अहंकेतुरहंमूर्धाऽहमुग्राविवाचनी। ममेदनुक्रतुंपतिः सेहानाया उपाचरेत् ।। ऋग्वेद 10.159.2
5 ममपुत्राः शत्रुहणोऽथो मे दुहिता विराट्। उताहमस्मिसंजया, पत्यौ मे श्लोक उत्तमः।। वही 10.159.3
6 अधः पश्यस्वमोपरि, संतरांपादकौहर। मातेकशप्लकौ दृशन्, स्त्री हि ब्रहमा बभूविथ।। वही 8.33.19
7 जायेदस्तंमघवन् त्सेदु योनिस्तदित् त्वा युक्ताहरयोवहन्तु।
यदाकदा च सुनवामसोमम् अग्निष्ट्वादूतो धन्वात्यच्छ।। वही 3.53.4
8 कल्याणीर्जायासुरणंगृहते। वही3.53.6
9 जायेवपत्य उशतीसुवासा। वही 4.3.2, अभिप्रवन्तसमनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासोअग्निम् । वही4.58.9
10 वही 10.85
11 गृहान्गच्छगृहपत्नी यथासोवशिनीत्वंविदथमावदासि। वही10.85.25, वही 10.25.27
12 वही 10.85.43
13 प्रतितिष्ठ विराडसि, विष्णुरिवेहसरस्वति। सिनीवालिप्रजायतां, भगस्य सुमतावसत् ।। अथर्ववेद 14.2.15
14 अथह याज्ञवल्क्यस्य द्वे भार्येबभूवतुर्मैत्रेयीचकात्यायनीच। बृहदारण्यकोपनिषद् 4.5.1
15 न कांचन परिहरेत्तद्व्रतम् । छान्दोग्योपनिषद् 2.13.2
16 बृहदारण्यकोपनिषद् 1.4.1-3
17 अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया। शतपथब्राह्मण 5.2.1.10
18 इयमग्नेनारीपतिंविदेष्द सोमोहिराजासुभगांकृणोति। सुवानापुत्रान् महिषीभवाति गत्वापतिंसुभगाविराजतु।। अथर्ववेद 2.36.3
19 यषा सिन्धुर्नदीनांसाम्राज्यंसुषुवे वृषा। एवा त्वंसम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तंपरेत्य।। वही1
20 सम्राज्ञ्येधि श्वशुरेषुसम्राज्ञ्युतदेवृषु। ननान्दुः सम्राज्ञ्येधि सम्राज्ञ्युत श्वश्र्वाः।। वही 14.1.24
21 सम्राज्ञी श्वशुरेभव, सम्राज्ञी श्वश्वांभव। ननान्दरिसम्राज्ञीभवसम्राज्ञीअधि देवृषु।। ऋग्वेद 10.85.46
22 यत्रा सुहार्दः सुकृतोमदन्ति विहाय रोगंतन्वः स्वायाः।
23 तंलोकं यमिन्यभिसंबभूव सानोमाहिंसीत् पुरुषान् पशूँश्च।। अथर्ववेद 3 28 5
24 आशासानासौमनसंप्रजांसौभाग्यंरयिम् । पत्यनुव्रताभूत्वा सं नह्यस्वामृताय कम् ।। वही14 1 42
25 प्रबुध्यस्वसुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय।
गृहान् गच्छगृहपत्नी यथासो दीर्घं त आयुः सविताकृणोतु।। वही 14 2 75
26 अपाः सोममस्तमिन्द्रप्र याहि, कल्याणीर्जायासुरणंगृहेते। यत्रा रथस्य बृहतो निधानंविमोचनंवाजिनोदक्षिणावत् ।।ऋग्वेद 3 53 6
27 कुलायिनी घृतवतीपुरन्धिः स्योनंसीदसदनेपृथिव्याः। अभित्वा रुद्रा वसवो गृणन्तुइमाब्रह्मपीपिहिसौभगाय।। यजुर्वेद 14 2
28 एषा तेकुलपाराजन्, तामुतेपरिदद्मसि। ज्योक् पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः समोप्यात् ।। अथर्ववेद1.14.3
29 आषाढासिसहमानासहस्वारातीः सहस्वपृतनायतः। सहस्रवीर्यासिसामाजिन्व।। यजुर्वेद 13.26
30 स्योनं ध्रुवंप्रजायै धारयामितेऽश्मानंदेव्याः पृथिव्या उपस्थे। तमातिष्ठानुमाद्यासुवर्चादीर्घं त आयुः सविताकृणोतु।। अथर्ववेद14.1.47
31 ऋग्वेद 1.157.3
32 वही 1.66.5
33 सामान्यावियुतेदूरेअन्ते ध्रुवे पदे तस्थतुर्जागरूके। उतस्वसारा युवतीभवन्तीआदुब्रुवातेमिथुनानिनाम।। वही3.54.7
34 स्तुतामयावरदामाताप्रचोदयन्तामपावमानी द्विजानाम। आयुः प्राणंप्रजांपशंकीर्तिंद्रविणंब्रह्मवर्चसम महयंदत्त्वाव्रजतब्रह्मलोकम।।